उसका सच

अरविंद कुमार सिंह

उसका सच

धूलभरी सड़क पर हिचकोले खाती हुई बस अपने आखिरी मुकाम पर पहुँच चुकी थी। कंडक्टर की आवाज के साथ ही झपकियाँ लेती आँखें खुल गईं। हड़बड़ी, उत्सुकता और

उत्साह के साथ यात्री अपने-अपने थैले और गठरियाँ सँभालते हुए दरवाजे की तरफ लपके।

बस से बाहर रात ज्यादा गहरी दिखाई दी। आसमान में तारे अभी चमक रहे थे। पर चाँदनी का पसरा हुआ रूप कुछ झीना हो चला था - सफेद बादलों पर जैसे कोई हल्की चादर डालता जा रहा हो। फिर भी, सब कुछ साफ देखा जा सकता था।

छिटपुट पेड़, ऊँचे-नीचे खेत। टीले-भाटों से घिरा यह सिपाह गाँव - जिले का पिछड़ा और अति उपेक्षित हिस्सा। आगे नदी तक जाने के लिए सड़क नहीं, सिर्फ पगडंडियाँ थीं। पगडंडियों के किनारे-किनारे सरपतों के झुरमुट तथा भटकइया और मदार के पौधे थे।

तीन मील पैदल चलना होगा - बहुत खराब रास्ता है। लोग आपस में बतियाते दिखे। तीर्थयात्रियों में खुशी और उमंग के साथ चिंता, बेचैनी और शोर का अद्भुत मेल था। कई एक अपने साथियों का नाम ले पुकारते और उन्हें खोजते फिर रहे थे। किसी के चेहरे पर झुँझलाहट थी। कोई खिलखिला भी रहा होता। इस गुल-गपाड़े में हमीनपुर हरिजन टोले के मनीराम की आवाज सबसे ऊँची थी।

'सुनयना भौजी...ई'

उसके अलग स्वभाव और व्यवहार के कारण टोले ने मनीराम को एक और नाम दिया था - 'रसिया'। यह सिर्फ बच्चों, नौजवान और बूढ़ों के लिए ही नहीं, बल्कि टोले की हर नई-पुरानी औरत के लिए भी रसिया ही था। बिरहा खूब अच्छा गाता। बगैर फरमाइश के ही शुरू हो जाता। नई युवतियों को भौजी कहकर बुलाता। होली का अबीर माथे के बजाय गाल पर रगड़ता। किसी के एतराज पर फौरन तुलसी की चौपाई बाँच अपनी साफदिली का इजहार करता। टोले की रीत में रसिया सभी के लिए राग-देवता था - दुख में भी, सुख में भी।

इस महीने का यह पहला मंगलवार था जब रसिया ने हरफूल की मौजूदगी में सुनयना की चिंता दूर करने की राह खोजी - 'सब पूरा होगा भौजी। एक नहीं दर्जन भर किलकारी मारेंगे। लेकिन एक बार चलना होगा?'

'कहाँ?' सुनयना ने जिज्ञासा से देखा।

'दूर नहीं भौजी, बस धोपाप। बड़ा जस है धोपाप घाट का। कहते हैं बाभन रावण को मारने के बाद भगवान राम की कोमल गदोड़ी में लंबे-लंबे बाल उग आए थे। आखिर रावण ज्ञानी ब्राह्मण था - ब्रह्मदोष तो लगना ही था। लेकिन घाट की महिमा! अयोध्या जाते समय जब राम वहाँ नहाए तो सारे बाल साफ - सारे पाप खत्म! तभी से नदी के उस घाट का नाम पड़ा धोपाप घाट।' रसिया कथावाचक जैसी मुद्रा में था।

'तो ले जा अपनी भौजी के भी पाप धुला दे।' हरफूल ने सुनयना की आँखों में झाँकते हुए कहा।

'तो का मैं पापिन हूँ?' सुनयना ने नाराजगी जाहिर की। रसिया हँस पड़ा, 'भइया को कहने दे भौजी। तू काहे नाराज होती है। फिर पाप तो हर आदमी से होता है। चलते रास्ते चींटी दब गई - का पाप नहीं है। पर सारी महिमा घाट की ही नहीं, वहाँ की पहाड़ी पर मौजूद पापर देवी की शक्ति की भी है। भगवान ने स्वयं भी देवी की पूजा की थी। देवी के मंदिर में साफ मन दुआ माँगो तो सब पूरा होगा। दियरा के राजा को बुढ़ाई बेला में लड़का पैदा हुआ था। दूर की छोड़ो, गाँव के चंदू बनिया को ही देखो...।' रसिया की आँखें नाच उठीं।

हरफूल ने व्यंग्य कसा, 'तू भी देवी से अपने लिए बीवी माँग ले।'

रसिया ने जोर का ठहाका लगाया, 'बीवी तो हमारे लिए भौजी ला देंगी भइया -एकदम अपनी तरह। ...लेकिन अबकी भूलना मत भौजी - दशमी के दिन है नहावन। फिर देखना नौ महीने बाद, 'किलकारी मरिहें ललना तोरे अँगना', भइया को साथ जरूर ले चलना। आते वखत काली बाग का मेला भी घूमना।' रसिया आगे बढ़ चुका था।

हरफूल, सुनयना की तरफ देखकर मुस्कराया। सुनयना की आँखें झुक गईं। पल्लू सिर तक खींच लिया।

रसिया के जाने के बाद से ही सुनयना टूटे पत्ते सी खामोश बनी खोई-खोई रही। हरफूल को काम से निपटते देख सकुचाते हुए पूछा, 'तो का अबकी दशमी को चलोगे?'

हरफूल ने झिड़कियाँ दीं, 'अगर देवी-देवता की दुआ से ही बच्चा पैदा होने लगे तो फिर मरद की क्या जरूरत। तू भी रसिया की बात में...।'

'लेकिन आदमी का विश्वास तो चला आ रहा है।' सुनयना बात काटते हुए बोली।

'तो क्या तुझे मुझ पर विश्वास नहीं है।' हरफूल की निगाहें टेढ़ी हुईं मानो गुस्सा किया हो, किंतु दूसरे ही क्षण आँखों में मुस्कराहट थी। फिर भी सुनयना की उदासी कम नहीं हुई।

काम से फारिग हरफूल का ध्यान जब सुनयना की ओर गया तो वह खुद भी चिंतित हो उठा। सुनयना की आँखें भीग आई थीं। पति-पत्नी कुछ क्षण तक एक-दूसरे से आँखें चुराते रहे। उनकी चुप्पी गैरजरूरी कामों में उलझने का बहाना भी दिखीं। लेकिन वह भी कब तक - मन के पीछे एक पराजित द्वंद्व था। वही द्वंद्व हरफूल को सुनयना के नजदीक खींच ले गया, 'इस घर में किसलिए बच्चा पैदा करेगी। हमारी तरह देह पीसने और दुख ढोने के लिए। कौन सी खतौनी और खाता अपने पास रखा है कि आते ही उसके नाम कर दूँगा - ले बेटा, खानदान का चिराग बन। फिर मजदूरी भी तो ऐसी नहीं कि ढंग से खिला-पिला, पढ़ा सकें। जब अपना ही पेट पालना मुश्किल हो रहा है तो बेटा हो या बेटी, बाप को क्या सहारा देगा।' अंतिम क्षणों तक हरफूल के तर्क की आवाज महीन होती गई। उसके शब्दों में सिसकियों का पूर्वाभास होने लगा। उसने अब तक जो कुछ भी कहा था, सुनयना को समझाने और दिलासा देने के लिए।

'औरत होते तो...।' सुनयना ने एक लंबी साँस ली। उसमें शताब्दियों का दर्द था। पति ने उसके दर्द को और बढ़ा दिया। आँखें पोंछते हुए उसने जैसे शाप को पोंछा हो।

'तू पागल बन रही है।' हरफूल की परेशानी बढ़ गई। सुनयना के विक्षोभ और विषाद ने उसके अंदर के मर्द को झकझोर दिया।

'हाँ... मैं पागल हूँ।' माँ न बन पानेवाली औरत का यह सख्त रूप था।

दरवाजे पर बोझिल सन्नाटा तैरने लगा, जबकि शाम की बेला में टोले की चहल-पहल बढ़ रही थी। हरफूल जिस चिंता पर सवार था, वहाँ सुनयना भी साथ खड़ी थी। वह

पीछे मुड़कर देखता - नीम-हकीम, पूजा-पाठ सभी उसके लिए बेकार रहे। वह पति है। एक पति की जिम्मेदारी को वह अच्छी तरह जानता है, लेकिन बहुत कुछ अपने वश में नहीं, जबकि सुनयना की जिद और इच्छा थी। उसकी इच्छा का साथी तो उसे बनना ही चाहिए।

'तू औरत है। औरत का दुख मैं भी समझता हूँ। वैसे मेरा मन देवी-देवता पर टिकता नहीं, पर तेरा विश्वास है तो जहाँ कह, वहीं चलूँ। क्या मेरी इच्छा नहीं होती घर में एक बच्चे की किलकारी गूँजे।' हरफूल ने अपनी चिंताओं और सपने की बातें खोल कर खुद को हल्का महसूस किया।

'तो क्या दशमी को चलोगे?' सुनयना ने उत्सुकता से देखा।

'जरूर।'

दो दिलों में हुलास की लहरें एक साथ उठीं।

लेकिन हरफूल आज नहीं आ सका। पैर में अरहर की खूँटी धँस जाने से हुआ घाव और बहता मवाद ही सिर्फ कारण नहीं था, बल्कि मजबूरी पैसे की थी। तीन घर से निराश होने के बाद चौथी जगह बीस-रुपया मिला भी तो दो हफ्ते के अंदर लौटाने की शर्त पर।

पैसे की कमी ने उनकी मनोकामना पर हिमपात कर दिया। घर में ऐसी कोई भी चीज दिखाई नहीं दे रही थी जिसे बेच कर वे धोपाप घाट तक जा सकते हों। बच्चे की किलकारी की जगह उनके कानों में खुद की हूक सुनाई देने लगी। सुनयना अकेले जाने को तैयार नहीं थी। हरफूल की जिद थी कि वह जरूर जाए। जब विश्वास है तो शायद धोपाप घाट और पापर देवी की कृपा से ही कोख भर जाए।

बच्चे की लालसा ने सुनयना को अकेले जाने के लिए मजबूर कर दिया। हरफूल के न आने की बेबसी रास्ते भर सुनयना को रुलाती रही। बस में कई लोग ऊँघने लगे थे। कुछ को बाहर की चाँदनी में शांत खड़े पेड़, जादुई तिलिस्म की तरह रहस्यमय और खामोश दिखते घरों ने सम्मोहित कर लिया था। नींद और प्रकृति का अनन्य रूप भी

सुनयना को अपनी ओर नहीं खींच सके। कभी-कभी आदमी दूर जा कर भी एकदम नजदीक हो जाता है, जितना कि वह साथ होने पर भी नहीं होता। सुनयना-हरफूल से दूर होते हुए भी साथ थी, जबकि बगल में बैठी पड़ोसिन कलपा बुआ का सिर नींद में उसके कंधे पर गिरा-गिरा जा रहा था।

'देवी से तुम्हारा पैर जल्दी ठीक हो जाने की दुआ माँगूँगी फिर लड़का...।' खुद के बजाय सुनयना ने जैसे हरफूल से कहा हो।

'सुनयना भौजी।' भीड़ और शोर को चीरती रसिया की दुबारा आई आवाज सुनयना को अटपटी लगी।

'यहीं तो हूँ, का चिल्ला रहे हो।' वह जैसे सोते से जागी। लपकते हुए टोलेवालों के बीच जा पहुँची।

'सुनयना का बड़ा ख्याल रखता है।' कलपा बुआ ने व्यंग्य मारा। बुआ बाल विधवा थीं। नौजवान लोगों के हँसी-मजाक को वह छिनरपन कहतीं।

'रखना भी चाहिए, देवर हैं...।' टोले की शोभा काकी बुआ के रूखे व्यवहार से चिढ़ती थीं। अवसर मिलते ही वह बुआ के खिलाफ मोर्चा सँभाल लेती।

'लेकिन सुनयना भौजी हरफूल भइया की याद में एक रात भी...।' रिश्ते की एक ननद ने सुनयना से ठिठोली की। वह झेंप उठी। जो रंगे हाथ पकड़ी गई थी। असहजता को छिपाने के लिए झोले को दूसरे हाथ में बदल लिया। सिर के पल्लू को माथे तक खींचा। रसिया से आँख मिलते ही सकपका उठी। उलाहनाभरी निगाहों से ननद की ओर देखा। एक-दूसरे को मजा चखाने की हँसी दोनों चेहरों पर एक साथ फूट पड़ी।

'भइया भी तो सुनयना भौजी की याद में आज रात...।'

'चुप रह।' बुआ ने रसिया को डांटा। त्योरियों में बल पड़े, श्राप देने वाले ऋषि की तरह बुआ का लहजा सख्त हो आया, 'कहाँ चल रहा है - धोपाप-देवी-देवता के घाट...।'

पर रसिया कहाँ चुप रहनेवाला। ऐसे अवसरों पर ही उसकी हरकतें उसका नाम सार्थक करती। वह आगे बढ़कर सैल्यूट की मुद्रा में बुआ के सामने खड़ा हो गया। उसकी आँखों में शरारती मुस्कराहट थी।

'हम घाट और भगवान से क्यों डरें। का हमने कोई पाप किया है। धोपाप घाट और देवी मैया के दरवाजे चल रहा हूँ तो हाथ-जोड़ कहूँगा - हमें धन-दौलत कुछ नहीं, बस सुनयना भौजी जैसी बीवी चाहिए, जिसे दिन भर निहारता रहूँ। ...कहो भौजी?' रसिया ने सुनयना की स्वीकृति चाही। उसने भी साथ दिया। एक साथ फूट पड़ा हँसी का फव्वारा बुआ को छेड़ने के लिए जैसी काफी हो। 'राम-राम दूर हट... दूर हट...' बुआ झल्लाते हुए आगे बढ़ गईं। उलाहना देते हुए कहा, 'आज के औरत-मरद पर तीरथ-धरम में भी बदमाशी सवार रहती है... घोर कलयुग आ गया है।'

रसिया के हाथ जैसे खिलौना आ गया हो। लपकते हुए आगे आया, बुआ का पैर पकड़ कर बैठ गया, 'हे सतयुग की बुआ काहे कलयुगी औलाद पैदा कर दी।' साथ के सभी लोग कौतुक और मजे लेने की मुद्रा में बुआ को घेर कर खड़े हो गए। रसिया से अलग होने की बुआ ने कोशिश नहीं की। लोगों की हँसी में इस बार खुद को भी शामिल कर लिया। झुक कर रसिया का कान पकड़ा, 'एकदम बच्चा बन जाता है... चल आगे।'

हँसी, शोर और तालियों से जैसे सभी ने बुआ का सम्मान किया हो। रसिया ने फुर्ती दिखाई। उसकी चाल तेज हो गई। उसे अचानक तुलसी याद आ गए। रामचरित मानस की कोई चौपाई गाता हुआ वह वर्तमान से दूर चला गया था। साथ के कई लोग चौपाई दुहराने लगे।

आगे बढ़ते लोगों का मेला था। गीत था। सुनयना थी। रास्ता जाने किस ऊबड़-खाबड़ खोह से गुजर रहा था, जाने कब अंत होगा? कुछ दिन पहले हुई बरसात से दबी धूल स्नानार्थियों के पैरों से फिर उड़ने लगी। तलवों में कंकड़ चुभने लगे। अच्छा ही हुआ हरफूल नहीं आया, सुनयना के मन को तसल्ली हुई।

भोर होने से पहले रसिया की टोली धोपाप घाट पर पहुँच गई। नदी तट को जोड़ती घाट की लंबी-चौड़ी सीढ़ियाँ काली पड़ चुकी थीं। उनकी सीमेंट और ईटें टूटी हुई दिखाई दीं।

सीढ़ियों से जुड़ा एक खाली मैदान था... रेत-धूल और दिशा फराख्त से निपटते लोगों की गंदगी से भरा हुआ। स्नानार्थियों की भीड़ यहाँ भी फैल चुकी थी। इनके बीच चादर झाले कुछ ऊँघते लोग भी दिखाई दिए। घाट की हलचल इनकी नींद और थकान पर कमजोर पड़ रही थी।

कुंभ जैसी ख्याति धोपाप घाट को नहीं मिली थी। चार-छह जिले तक के लोग ही इस घाट से जुड़ी कथा और यहाँ की देवी की महिमा को सुनते चले आ रहे थे। सरकारी बंदोबस्त भी साधारण ही था... गिनती के दिखाई देते पुलिस वाले, जनरेटर से की गई रोशनी, डूबते लोगों को बचाने के लिए नौकाएँ। स्वास्थ्य केंद्र की तरफ से एक तंबू, जहाँ डॉक्टर की जगह कंपाउंडर की ही सेवाएँ उपलब्ध थीं। यद्यपि इस वक्त वह भी नदारद था। दवाइयों के नाम पर खाली डिब्बा।

सुनयना के लिए हर दृश्य अपरिचित और मोहक होता। घर-गृहस्थी से दूर यह स्वप्न जैसी दुनिया थी। छिटपुट बल्बों की रोशनी - जैसे जल में तारे उतर आए हों। उसकी चिंताएँ कुछ क्षण के लिए स्थगित हो गईं। विस्मय और जिज्ञासा से हर दृश्य पर नजर दौड़ती रही... जल में डुबकियाँ लगाते लोग। पिंडदान करवाते पंडे और पुजारी। बछियों की पूँछ पकड़ परलोक सुधारने की चिंता लिए औरत और मर्द। राम नाम की गूँजती जय-जयकार, ऊँची पहाड़ी पर स्थित पापर देवी के मंदिर की ओर उमड़ती भक्तों की भीड़, चिल्लाते लाउडस्पीकर। सुनयना को एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा करती, कभी एकदम फिरकी की तरह घूमकर तैरती नावों को देखने में मजा आ रहा था। हरफूल होता तो वह भी नाव में बैठती। उसे साथ ले कर नदी में नहाती, उथले पानी में भी डूबने का नाटक करती, और क्या-क्या करती... 'धत्त' वह मुस्कराई और खुद को डाँटा भी।

'खड़ी-खड़ी का सोच रही है, जा तू भी नहा...।' बुआ ने गुस्सा किया। लोगों के नदी में उतर जाने के बाद अकेली बची बुआ कपड़े और सामान की रखवाली कर रही थीं।

'तू भी चल।' सुनयना बुआ की नाराजगी भाँप गई।

'कैसे चलूँ?' बुआ की आँखों में शिकायत थी, 'चोर-चांडाल तो हर जगह फिराक में रहते हैं। निगाह टली कि सामान गायब।'

'धोपाप में पाप...।' सुनयना मन ही मन हँस पड़ी। बुआ अब करीब बैठे छोकरे पर खफा हो गईं, यह घाट पर नहाती औरतों की देह को एकटक निहार रहा था। सुनयना ने भी देखा, लड़के की उम्र उन्नीस-बीस के करीब रही होगी। आँखें छोटी, रंग साँवला, बेतरतीब दाढ़ी और मुहासों भरा चेहरा। सूखे पपड़ाए होठों पर व्याकुल प्यास। वह खुद से भी चिढ़ा हुआ दिखाई दिया। उसके पैर में गहरा घाव था। उस पर भिनभिनाती मक्खियों, धूल, रेत के प्रति भी वह लापरवाह था, जैसे पैर खुद का न हो। सुनयना को लड़के के प्रति दया आई, बेचारा... लेकिन बुआ उसे भगाने पर तुली थीं।

'भौजी।' रसिया की आवाज बीच धारा से आई। तैरने की कलाबाजी कर रहा था वह।

'हाय दइया।' बेचारे की घरवाली होती तो कभी न जाने देती।

रास्ते में ठिठोली करनेवाली ननद सुनयना को नदी के जल में खींच ले गई। दोनों 'छपकोरिया' खेलने लगीं। रसिया की आवाज फिर आई। वह भौजी को आगे आने के लिए कह रहा था।

'ना बाबा...' सुनयना ने कान पकड़े और किनारे ही नहाने लगी। तभी एक बूढ़ा पंडा आ गया। उसके हाथ में एक बछिया की रस्सी थी। बछिया भूखी और थकी सी थी। बूढ़ा गऊदान कराने की जिद कर रहा था। सुनयना की नजर बुआ पर जा टिकी।

'बीस आना... बीस आना... ।' बुआ कैसेट की तरह बज उठीं।

'इस महँगाई में बीस आने से क्या होगा मावा...।'

'इससे ज्यादा नहीं दूँगी।' सुनयना बाहर आई और झोले से बीस आने निकाले।

पंडित ने उसे बछिया की पूँछ पकड़ाई। उसके होंठ एक लय में कुछ देर तक बुदबुदाते रहे। सुनयना को पंडित पर गुस्सा आ रहा था। बीस आना निकल जाने का अफसोस उसे सता रहा था।

'बाबा अच्छा आशीर्वाद देना। पर पहुँचते ही पाँव भारी होना चाहिए।' बुआ के दोनों हाथ जुड़ गए।

सुनयना लजा उठी। 'बुआ भी गजब हैं...।' पंडित की आँखें फैल गईं। मानो तपस्या से मुक्त होने के बाद वह संसार पर दृष्टिपात कर रहा हो। मगर बुआ की चौकस निगाहें उसे बेंधती हुई लगीं। जल्दी में चावल और हल्दी का अक्षत जल, अन्य दिशाओं की तरफ फेंकने के बजाय सुनयना पर ही फेंकने लगा। बुआ अंदर से चिढ़ उठीं, 'बबवा मतिभ्रम हो गया है?'

नहाते हुए सुनयना का ध्यान किनारे आए नवागंतुकों पर गया। दो औरतें, दो मर्द- एक नवयुवक, एक अधेड़ उम्र आदमी। औरतें भारी और थुलथुल बदन की। किंतु उम्र बढ़ने के बाद भी गाल ऐसे लाल कि छू देने से ही खून छलक आए। अधेड़ मर्द के बालों में सफेदी उतर आई थी। काले करने के बाद भी सफेदी छिपाए न छिप रही थी। हालाँकि शरीर का वजन और उम्र का दबाव उसकी फुर्ती पर नहीं था। दूसरे मर्द का हुलिया और व्यवहार नौकरों जैसा था। नौजवानी में भी रूखी आँखें, बुझा चेहरा, शरीर से कमजोर। फिर भी, अपनी जिम्मेदारियों के प्रति वह एकदम सतर्क था।

नौकर के एक हाथ में कपड़ों से भरी हुई प्लास्टिक की डोलची थी। दूसरे हाथ में बड़े बालोंवाला विदेशी नस्ल का एक सफेद कुत्ता। कुत्ते का नाम टोनी था। टोनी नौकर से ज्यादा वफादार था। वह जमीन पर उतरने को अमादा था।

दोनों औरतें खिलखिला रही थीं। वे नहीं चाहती थीं कि टोनी नौकर के हाथ से छूट कर जमीन पर आए और धूल-मिट्टी में खुद को गंदा कर ले।

सुनयना के लिए नवागंतुक किसी अन्य दुनिया के प्राणी लगे। उन्हें देखते हुए वह ठिठकी खड़ी रही। नौकर पर तरस आया, औरतों के लिए ईर्ष्या।

'जल्दी नहा के आ जा...।' बुआ ने लगभग चिल्लाते हुए कहा।

मंदिर की ओर बढ़ते श्रद्धालुओं का जयकारा फिर सुनाई दिया। उसने दो-तीन डुबकियाँ लगातार लगाई और नदी से बाहर निकल पड़ी। किनारे आते ही उसके पैर रुक गए।

टोनी नौकर की गिरफ्त से छूट कर इधर-उधर दौड़ने लगा था। नौकर भी उसके पीछे दौड़ रहा था।

'टोनी-टोनी... 'दोनों औरतें नदी के जल में खड़ी-खड़ी आवाज देने लगीं। टोनी की स्वामीभक्ति उन्हें चिढ़ा रही थी। टोनी ने हुक्म न मान कर उन्हें हास्यास्पद बना दिया था। अब आवाज देने के बजाय वे उसे चुपचाप देख रही थीं। टोनी कहीं गुम न हो जाए, यही चिंता उनके चेहरे पर थी। अधेड़ आदमी ने नौकर की लापरवाही पर गाली दी और नहाना छोड़ कर नंगे बदन टोनी-टोनी चिल्लाते हुए वह भी दौड़ने लगा।

सभी की निगाहें टोनी पर थीं। वह सुंदर और प्यारा कुत्ता था। भीड़ में किसी के भी हत्थे चढ़ सकता था।

लेकिन सुनयना की आँखों में कुत्ता नहीं, काला जूता था। बिल्कुल नया। टोनी के पीछे दौड़नेवाले अधेड़ न कुछ ही देर पहले जूता किनारे पर उतारा था। जूते ने सुनयना में उथल-पुथल मचा दी। गर्मी की धूप में हरफूल का जलता पाँव, बारिश और ठंड में सिकुड़ी उँगलियाँ, खेत-जवार में नंगी खूँटियों-काँटों से घायल हुआ पैर-एक ही क्षण में सामने आ गए। एक दिन जूता खरीदने की बात चली तो हरफूल हँसा। नए की बात क्या, फटा-पुराना भी नसीब में हो तो... सुनयना की आँखें उसे हरफूल के पैरों में देखने लगीं। 'एकदम नाप का है।' जैसे किसी ने कानों में कहा हो। वह खिल उठी। लेकिन इसी समय 'जयकारा' के स्वर ने उसके इरादे पर पानी फेर दिया। मन में भय समा गया। देवी की चौखट सामने दिखाई दे रही थी। वह क्या करने जा रही है... पाप है यह। भगवान राम के घाट और देवी मैया के दरवाजे पर यह ठीक नहीं। वह काँप उठी। घाट और मंदिर से ही नहीं, उगते सूरज से भी माफी माँगी।

बुआ झोले से सरौता निकाल सुपारी कतरने लगी हैं। लोग पाप धोने के साथ शरीर का मैल भी छुड़ा रहे हैं। कुछ अभी टोनी का पीछा करते नौकर और उसके अधेड़ मालिक को ही देखे जा रहे हैं। जूते पर सिर्फ सुनयना की ही नजर है।

जरूरत ने उसे फिर लोभी बना दिया। मानसिक द्वंद्व पीछे छूट चुका था। वह लपक कर जूते के पास जा पहुँची। भीगी धोती को जूते पर छोड़ते हुए धोती और जूता एक साथ झोले में भर लिए। काम तेजी और फुर्ती से हुआ था, फिर भी मन में खटका तो था ही। बुआ पर नजर पड़ी तो घबरा उठी, किंतु बुआ कनखियों से उस जवान छोकरे को निहार रही थीं जिसकी निगाहें घाट पर नहाती औरतों का जायजा लेते हुए सुनयना पर आ कर अटक जाती थीं। उसने मन ही मन छोकरे को गालियाँ दीं और बुआ के बगल में जा बैठी।

टोनी के पकड़ में आते ही जूता गायब हो जाने का पता चला। भद्र महिलाएँ नौकर पर गुस्सा उतारने लगीं। टोनी नाराजगी में नौकर पर भौंकने लगा। अधेड़ मर्द को मलाल था कि लुच्चों-लफंगों और इन दरिद्र गँवारों के बीच वे क्यों आए। उसने धमकी दी कि चोरी करने वाले का हाथ-पैर तोड़ देगा। तभी हाथ में डंडा लिए हुए एक पुलिसवाला दिखाई दिया। वह इस तरफ ही आ रहा था। सुनयना बदहवास हो गई। बुआ को बातों में उलझाना चाहा पर बुआ का ध्यान भीड़ पर था।

'कोई भागने न पाए। चोर यहीं कहीं होगा। सबके सामान की तलाशी लो।' किसी ने राय दी।

'जूताचोर भला यहाँ टिकेगा। पहन कर चंपत हो गया होगा।' कोई कह रहा था।

'एक जूता गायब हो जाने पर लोग इस कदर हल्ला मचा रहे हैं जैसे खजाना लुट गया हो...' सुनयना को घबराहट में रोना आ रहा था।

पुलिसवाले ने पहुँचते ही भीड़ को खदेड़ा। डंडा घुमाते हुए गालियाँ बकी। अधेड़ आदमी और दोनों महिलाओं की शिकायत को गंभीरता से लिया। टोहती आँखों से अगल-बगल ही नहीं दूर तक निहारा। हर चेहरे को पढ़ने की कोशिश की। जूते की

चोरी जैसे मामूली घटना नहीं थी। अगल-बगल के लोगों की गठरियों, झोलों की तलाशी लेता हुआ वह गालियाँ भी बकता जा रहा था।

'नाहक गाली दे रहा है। राम के घाट पर जिसने भी चोरी की है, उसे सजा मिलेगी ही। ऊपरवाले नाथ अंधे तो नहीं हैं।' पुलिसवाले को सुनाने के बहाने बुआ ने कहा।

सुनयना की धड़कनें खुद को धिक्कारने लगीं। मौका था नहीं कि जूता निकाल कर फेंक सके। पुलिसवाला करीब आ रहा था।

सुनयना को लगा बहुत से लोग उसे घूर रहे हैं। नजदीक बैठा छोकरा भी।

'बुआ जा तू भी नहा ले।' सुनयना को झुँझलाहट हुई। वह अति शीघ्र यहाँ से निकल जाना चाहती थी, पर बुआ तो पूरा तमाशा देखने पर तुली थीं।

रसिया ने पूछा, 'भौजी तुमने कितनी डुबकियाँ लगाईं? उसका शरीर ही नहीं मन भी सुन्न हो चुका था। उस समय कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था - न रसिया, न घाट। उन सभी से उसे कोफ्त हो रही थी जिन्हें यहाँ से निकल चलने में कोई हड़बड़ी नहीं थी।

पुलिसवाला रसिया के थैले की तलाशी ले चुका था। वह सुनयना की तरफ बढ़ा। सुनयना काँप उठी, काटो तो खून नहीं। ...हाय राम किस घड़ी में जूता चुराया, भाड़ में जाए जूता - भाड़ में जाएँ देवी-देवता...। हे भगवान, आज बचा लो। वह मन ही मन भगवान से विनती करती जा रही थी। तभी उसे कपड़े बदलने का खयाल आया। ब्लाउज के बटन खोलते हुए घुटनों पर झुकी। सिपाही ने डंडा नचाते हुए घूरा। सुनयना बेफिक्र दिखाई दी। ब्लाउज के सारे बटन खुल गए थे।

पुलिस का सिपाही बुआ की चौकस नजरों से टकरा कर दूसरी तरफ मुड़ गया। उसने करीब बैठे छोकरे की पीठ पर जोर से डंडा मारा, 'अबे तू यहाँ क्या कर रहा है?'

'अबे साले - मादर...। चोरी करके कहाँ जाएगा।' पुलिस का सिपाही अपनी पर उतर आया था। उसने छोकरे को दूर तक दौड़ाया और खुद भी उसके पीछे दौड़ने लगा।

बुआ की खीस फैल गई। रसिया भी हँसा।

लेकिन सुनयना की चिंता बढ़ गई, कहीं वह छोकरा कुछ बता न दे।

घाट की सीढ़ियों, रास्ते की भीड़-भाड़ और देवी के मंदिर तक न तो पुलिस का सिपाही मिला और न ही वह छोकरा। फिर भी साथ के लोगों की नजर जूते पर न पड़ जाए, वह झोले को बगल में दबाए रही।

देवी दर्शन से ले कर परिक्रमा तक वह भूली रही कि आखिर किसलिए यहाँ आई है। उसकी चिंता में बाहर रखा झोला था। सभी लोगों के सामान की रखवाली अब रसिया कर रहा था। स्वभाव से मजाकिया - क्या पता झोला उठा कर देखने ही लगे। सुनयना घबरा उठी। मंदिर से भागी-भागी बाहर आई, झोला पूर्ववत था। रसिया किसी साधू का भजन सुनने में मशगूल था। सुनयना के दिल को तसल्ली मिली लेकिन मुराद माँगना तो वह भूल ही गई। इच्छा हुई एक बार फिर लौट चले मंदिर की तरफ। लेकिन रसिया जा चुका था। सामान की रखवाली का जिम्मा अब उस पर था। वहीं बैठे-बैठे उसने देवी से माफी माँगी, फिर माँ बनने की प्रार्थना की।

काली बाग के मेले में पहुँचने तक दिन काफी चढ़ चुका था। उमस बढ़ गई थी। सभी लोग सुस्ताने के लिए एक पेड़ की छाया में जा बैठे। थोड़ी देर तक वे पेड़ की खामोशी पर भड़ास निकालते रहे। फिर अपनी-अपनी जिंदगी की रामधुन में शामिल हुए। हास-परिहास का दौर भी साथ-साथ चलता रहा।

काकी ने चमकते हुए कहा, 'हरामी गाली दे रही थी।'

'कौन?' सुनयना ने पलट कर देखा।

'जिसका साबुन गुम हुआ था।' काकी उसकी गाली पर अब भी खफा थीं।

'किसी ने चुरा लिया था क्या...।?' सुनयना में उत्सुकता थी।

'हमने', काकी ने निर्भीकता से कहा और गठरी से साबुन निकाल कर सामने रख दिया।

'महकउआ है।' रसिया की टकटकी पर काकी हँस पड़ीं।

'तुम पापिन हो?' रसिया ने मजाक में ही कह दिया।

'कौन यहाँ पुण्यात्मा बैठा है।' काकी के चेहरे पर ही नहीं, आँखों में भी गर्मी उतर आई थी।

रसिया भी चुप न रह सका, 'बुढ़ा गई तेरी अक्ल। देवी-देवता का आँगन मैला कर दिया।' काकी आग-बबूला हो उठीं। फिर ऐसी लुआठी फेंकी कि पूरा टोला ही जल उठा... 'किसने नहीं की है चोरी। तीन पुश्त तक का हाल जानती हूँ सबका।' काकी का मिजाज फड़फड़ाने लगा। इतिहास के पन्ने एक-एक कर खुलने लगे। राह चलते लोग भी ठिठकने लगे तो साथ के लोगों ने चुप्पी साध ली।

इस वार्तालाप से सुनयना को सुकून और संबल मिला। वह मन बना चुकी थी कि अब काकी को कोई नसीहत देगा तो वह भी जूता चुराने का खुलासा कर देगी। किंतु रसिया की चुप्पी और लोगों की बातचीत में वह पूछ बैठी, 'पाप का होता है?'

रसिया भी संशय में, पाप क्या होता है, कभी सोचा भी नहीं। लेकिन इतना जरूर जानता है कि कोई भी गलत काम पाप है। रसिया की राय पर सभी सहमत थे। 'गलत काम का है?' सुनयना ने जिज्ञासा से रसिया को देखा, फिर सबको।

'भौजी हठखेली मत करो। सबका मूड काकी ने वैसे ही खराब कर दिया है।' रसिया के खीज उठने पर भी काकी बुत बनी रहीं जैसे सुनयना ही अब उसकी वकील हो।

'सच्चे... हठखेली नहीं कर रही हूँ। पर तुम्हीं सब बताओ गलत काम का होता है? काकी ने बाल धोने को साबुन चुरा लिया तो कौन सी गलती कर दी। किसी का खजाना लूट कर अपना घर तो नहीं भरा।'

'यही तो बात है भौजी, कोई भी चोरी पाप है चाहे वह सुई की ही क्यों न हो।' काकी को अपनी गलती का एहसास दिलाने के लिए रसिया ने ऊँची आवाज में कहा।

बुआ ने भी फिकरा कसा, 'उसके साबुन से कितने दिन नहाएँगी।'

काकी को बात लग गई। उँगलियाँ चटखाने और चिल्लाने के बजाय सुनयना के नजदीक खिसक आईं। अपनी तरफ से वकालत करते देख काकी का दिल सुनयना के करीब हो चुका था। आँखों से ढुरकते आँसुओं को पोछते हुए बोलीं, 'तुम भी सुन लो दुलहिन - मैं पापिन हूँ। पर यह कोई नहीं पूछता कैसे जी रही हूँ। जब से तेरे काका मरे, तब से आज तक इस सिर को...।' काकी ने अपनी लटों को आगे कर दिया, 'तेल और साबुन मयस्सर नहीं हुआ। बेटे-बहू तो रोटी खिलाने में ही अहसान जताते हैं। नहाने कैसे आई हूँ कोई नहीं पूछेगा।'

'बेटों को ही कौन सा सिंहासन मिला है।' काकी की बात उचित होते हुए भी दोष सिर्फ लड़कों को ही नहीं दिया जा सकता, रसिया ने सोचा।

सुनयना को काकी के साथ गाँव-जवार की कई और बूढ़ी औरतें याद आ गईं। सबकी जिंदगी का अँधेरा उसकी आँखों के सामने था। उसे काकी की तरह रोने की आवाज सब तरफ सुनाई दी। वह काँप उठी, खुद के जीवन का अंतिम दृश्य जैसे सामने हो। वह सड़क की तरफ देखने लगी। सड़क पर चल रहे धूल सने पाँव, पसीने से भीगी देह, सिर पर गठरियाँ... उन गठरियों में जाने क्या होगा? काकी का चुराया हुआ साबुन या मेरा यह जूता...। जूते का खयाल फिर आ गया। मन के किसी हिस्से में छिपा हुआ अपराध-बोध जैसे लाग-डाट कर रहा था। ...वे अमीर लोग, फिर जूता खरीद लेंगे। मालिक, नौकर, टोनी, थुलथुल औरतें और यह जूता - सभी आँखों के सामने आ खड़े हुए। उसने सिर के साथ अपने किए को झटक दिया और काकी की ओर देखने लगी। काकी की आँखों में युगों से समाई बदहाली थी। उदास चेहरे पर हमेशा से व्याप्त दरिद्रता ने सुनयना के सामने फिर एक प्रश्न खड़ा कर दिया, 'रसिया भइया, तुम्हीं बताओ अगर कोई भूखा-नंगा किसी की रोटी चुरा कर खा ले तो का वह भी पाप होगा?'

रसिया मुस्कराया। भौजी का प्रश्न बिलकुल अटपटा था। रसिया के पास एक तयशुदा उत्तर था, 'हाँ', उसने स्वीकार में सिर हिला दिया। 'चोरी तो पाप हई है।'

'कैसे**?'** सुनयना ने पूछा।

'उसे माँग कर ही खाना चाहिए।' रसिया ने कहा।

'माँगने पर न मिले तो?' सुनयना ने रसिया को असमंजस में डाल दिया। साथ के लोग भी सोचने लगे। प्रश्न अबूझ पहेली बन चुका था। कुछ क्षण बाद रसिया ने किसी ज्ञानी-ध्यानी की तरह आकाश की ओर आँखें उठाई, 'न देनेवाले को भगवान दंड देगा। वह सबको देख रहा है।'

सुनयना खीज गई, 'यहाँ तो भूख से मर जानेवाले की भी किसी को चिंता नहीं।' वह चाह रही थी कोई और भी उसके पक्ष में बोले।

तभी काकी ने उँगलियाँ चटखाईं, 'अरे, ऊपरवाला का दंड देगा। दुख सहते-सहते बाल पक गए। पीटनेवाले को खाट, पिटे को जमीन, यही तो देखती चली आ रही हूँ। हाड़तोड़ मेहनत के बाद भी सूखी-रोटी के लाले पड़े रहते हैं, काहे नहीं फट पड़ते भगवान? जाने किस अँधेरी कोठरी में पाथर बनके बैठ गए हैं... सब हवा है - हवा। फूल माला चढ़ाओ - दुख गाओ पर कोई फायदा नहीं।' साथ के लोगों ने काकी का विरोध नहीं किया। उनकी चुप्पी में काकी का दर्द शामिल था। फिर भी वे उत्तेजित नही हुए। मन से हारे हुए, कमजोर लोग थे वे।

पेड़ की पत्तियाँ हिलीं। मंद बयार बह चली। पसीने से भीगे लोगों को कुछ राहत मिली। सभी लोग काली बाग का मेला घूमने के लिए उठने लगे। जल्दी घर पहुँचने की फिक्र में काली बाग का मेला भी सुनयना को रास नहीं आ रहा था। झोले को दूसरों की नजरों से बचा कर रखना भी मुश्किल था। कुछ खरीदे बगैर भी झोला पहले से भारी दिखाई दे रहा था। जादूगरी के खेलों, झूले-हिंडोले और सर्कस में सुनयना को अब रुचि नहीं। चाट, टिकिकी और गोल-गप्पों के खोमचे भी उसे अपनी तरफ नहीं खींच सके। यह झोले को ही छिपाती-लुकाती रही।

बुआ की जिद पर सुनयना ने जलेबी और गट्टे खरीदे। हरफूल के लिए एक चुनौटी। अपने लिए बिंदी, सिंदूर और लाल फीता।

टोले के लोग सड़क के किनारे बनी पुलिया पर बस से उतरे तो रात हो चुकी थी। पुलिया से जुड़ी कच्ची सड़क थीं, फिर आगे जा कर सड़क से फूटती हुई पगडंडियाँ। एक पगडंडी हरिजन टोले की तरफ चली गई थी।

रसिया सबसे आगे था। जेठ में भी कजरी गाता हुआ। मौसम और राग का मेल नहीं, जरूरी है मन में उत्साह और खुशी की कोई भी धुन। काकी का खून खौल रहा था, फिर भी वे उसे चुप होने को नहीं कह सकीं। बड़बड़ाती और कोसती रहीं गर्मी को, अपनी गठिया बतास को। साथ के लोग भी रसिया के गायन से बेगौर थे, उनके थके मुरझाए चेहरों पर घर पहुँचने की चिंताभरी ललक थी। लेकिन सुनयना अपनी सफलता पर खुश थी - पैरों में मानो पंख लग गए हों।

टोले में घुसते ही लोग अपने-अपने घरों की तरफ बढ़ गए। रसिया ने मुड़ कर भौजी से सलाम करना चाहा लेकिन सुनयना पहले ही खिसक गई थी। नाराज काकी ने मुस्करा कर देखा, रसिया को हँसते हुए विदा किया।

हरफूल दरवाजे पर खड़ा मिला। सुनयना आगे बढ़ गई, उसे चिढ़ाती और अधीर करती हुई। नीम के पेड़ तले खाट पर जा बैठी। 'थक गई' उसने मानो खुद से कहा। लेकिन मन की खुशी चेहरे पर छुपाए नहीं छुप रही थी। वह हरफूल की बेचैनी और कौतूहल की थाह लेने लगी, लेकिन उसके लिए वक्त जाया करना ठीक नहीं था, न ही उतना धीरज था। हरफूल सुनयना की बगल आ बैठा, 'का हुआ, काम बन गया?'

'धत्त', सुनयना तुनक गई। 'यह नहीं पूछोगे तुम्हारे लिए क्या लाई हूँ?' उसने इठलाते हुए कहा।

'का लाई हो?' हरफूल की निगाहें झोले पर जा टिकीं। झोला अभी भी उसके हाथ में था।

'पैर कैसा है?' हरफूल के पैर पर घाव देख सुनयना बोल उठी।

'मवाद निकल गया, बस ठीक ही समझो।' हरफूल की लापरवाही पर सुनयना नाराज हुई। पहले मवाद पोंछा, फिर पट्टी की। 'अब कभी तुम्हें चोट नहीं लगेगी। देखो, तुम्हारे लिए क्या लाई हूँ।'

उसने एक-एक करके झोले से चुनौटी, फीता, गट्टा और जलेबी निकाली, फिर जूता। जूते पर ठहरी हरफूल की उत्सुकता पर सुनयना मेले की रामकहानी सुनाने लगी।

हरफूल ने चुनौटी जेब के हवाले की। गट्टा एक खुद खाया, एक सुनयना के मुँह में ठूँस दिया। फिर लाल फीते का फूल बना कर पत्नी की चोटी में सजा दिया। अंत में उसने जूतों में पैर डाले - 'अरे, ये तो मेरे लिए ही बने लगते हैं...